Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
Available online at : www.gisrrj.com
OPEN ACCESS
© 2025 GISRRJ | Volume 8 | Issue 1 | ISSN : 2582-0095

महिला सशक्तिकरण के विभिन्न आयामों का अध्ययन *जितेन्द्र पाठक (असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, समाजशास्त्र)

डॉ. भीमराव अम्बेडकर
राजकीय महाविद्यालय, ऑडेन पडरिया, मैनपुरी, उ.प्र.

Article Info
Volume 8, Issue 1

Page Number : 11-21

Publication Issue :
January-February-2025

Article History
Accepted : 20 Jan 2025
Published : 05 Feb 2025

सारांश :

'शक्ति' से ही श्सशक्तीकरणश का सिद्धांत पोषित होता है। प्रचलित रूप में श्शक्तिश किसी कार्य को कर सकने की क्षमता को माना जाता है। सामाजिक सन्दर्भों में शक्ति का अर्थ अधिकारए हुक्म देने का हकए शासन करने या नियंत्रित करने की ताकत या प्रभावित करने की क्षमता इत्यादि है। इस प्रकार सशक्तीकरण का सामान्य अर्थ है जहाँ शक्ति न हो या जहाँ कम हो वहाँ पर शक्ति को और बढ़ा देना। ष्सशक्तीकरण आज एक प्रचलित शब्द बन गया है। इसका अर्थ अधिकार और शक्ति का विकेन्द्रीकरण है। इसका उद्देश्य वंचित वर्गों के लोगों को निर्णय लेने की प्रक्रिया में भागीदार बनाना है। दूसरे शब्दों में बात न कह पाने वालों को बात कहने देना है। सक्रिय समाज सेवी चाहते हैं कि सरकार कल्याण कार्यक्रमों द्वारा तथा कानूनी कदम उठाकर महिलाओं सहित गरीब लोगों को सशक्त बनाये। जब तक इन लोगों को वास्तव में सशक्त नहीं बनाया जाता तब तक शक्ति का प्रयोग दूसरे लोगों द्वारा किया जाता रहेगाए बजाय उनके कि बास्तविकता में शक्ति जिनके लिये हैष महिला सशक्तीकरण की अवधारणा कोई नयी नहीं है। यह सभी समाजों में सदा से रही हैए लेकिन महिला सशक्तीकरण को एक विचारधारा के रूप में देखा जाना और इसे एक सामाजिक आन्दोलन के रूप में इस्तेमाल किया जाना और जनसाधारण में इसका विस्तार इत्यादि तथ्यों को नया समझा जा सकता है। अब यह श्महिला कल्याणश से श्महिला विकासश और महिला विकास से श्सशक्तीकरणश का रूप ले चुका है तथा इसकी चर्चाए रिपोर्टिंग और आलोचनात्मक मूल्यांकन किया जा रहा है। और भी नयी बात है बालिकाओं और महिलाओं की श्विशेष समूहश के रूप में पहचान तथा महिला सशक्तीकरण से संबंधित प्रमुख विन्दुओं पर विशेष ध्यान दिये जाने की अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता का मिलना। इससे भी बढ़कर नयी बात यह है कि अन्तर्राष्ट्रीयए राष्ट्रीयए सामाजिक एवं पारिवारिक विकास तथा प्रगति के लिये महिला सशक्तीकरण के अपरिहार्य माने जाने की समझ और अनुभूति बढ़ी है। यह भी महसूस किया और माना जा रहा है कि महिला सशक्तीकरण को स्थापित करने के लिये सरकारीए गैर सरकारी और वैयक्तिक स्तरों पर वास्तविक संकल्प और प्रयास किये जाने की आवश्यकता है।

महिला सशक्तीकरण का अर्थ उन्हें आर्थिक रूप से स्वावलम्बीए आत्मविश्वासी और अपनी अस्मिता के प्रति सकारात्मक सोच वाला बनाना है ताकि वे कठिन परिस्थितियों का मुकाबला करने में सक्षम हों और विकास कार्यों में भी उनकी भागीदारी हो सके। एक सशक्त महिला को

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

निर्णय लेने की प्रक्रिया में हिस्सा लेने के लिये समर्थ होना चाहिए। शिक्षा इस दिशा में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करेगी।

मुख्य शब्दः– शक्ति और सशक्तीकरणए महिला सशक्तीकरणए विकास और अधिकारए शिक्षा का महत्व

संस्थागत संरचना:-

मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अन्तर्गत 1985 में महिलाओं (तथा शिशु विकास) के लिये एक अलग विभाग की स्थापना की गई थी, जिसका उद्देश्य एक ऐसे सरकारी तंत्र की स्थापना करना था जो महिलाओं तथा बच्चों के समग्र विकास को प्राप्त करने हेतु आवश्यक नीतियों, योजनाओं तथा कार्यक्रमों का निर्धारण करे और सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थाओं के बीच तालमेल बैठायें। पिछले कुछ वर्षों में, महिलाओं से संबंधित विचारणीय बातों की देखभाल के लिये, सरकारी स्तर पर नीतियों में कई बदलाव हुए हैं। सत्तर के दशक में महिला 'कल्याण' की सोच थी तो अस्सी के दशक में 'विकास' और नब्बे के दशक में 'सशक्तीकरण' और 'क्षमता निर्माण' पर अधिक जोर है। कार्यशील महिलाओं के लिये हास्टल की सुविधाएँ और उनके बच्चों की देखभाल के लिये डे केयर केन्द्र और पारिवारिक समस्याग्रस्त महिलाओं और लड़कियों के लिये लघु अवधि आवास की योजनाएँ, महिला कल्याणोन्मुखी थीं। स्पोर्ट फार ट्रेनिंग-काम-एम्प्लायमेंट (STEP) कार्यक्रम, जो गरीबी की रेखा से नीचे की महिलाओं के कौशल और रोजगार के अवसर बढ़ाने हेतु बनाया गया था, विकास उन्मुख था। ग्रामीण महिलाओं में मितव्ययिता को प्रोत्साहित करने वाली महिला समृद्धि योजना, निचले स्तर पर महिलाओं को संगठित करने के लिये बनी इन्दिरा महिला योजना और अनौपचारिक क्षेत्रों में गरीब महिलाओं की पूंजीगत आवश्यकताओं को पूर्ण करने हेतु बनाया गया राष्ट्रीय महिला कोष जैसी योजनाएँ सशक्तीकरण उन्मुखी थीं। राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं की देखभाल हेतु केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड (CSWB) सर्वप्रथम स्थापित संस्थाओं में है। यह 1953 में बनाया गया था। गैर सरकारी संस्थाओं के साथ सम्पर्क जाल बनाना इसकी मुख्य कार्यशैली रही है। सामाजिक आर्थिक कार्यक्रम, रोजगारपरक प्रशिक्षण, जागृति उत्पन्न करना, कामकाजी महिलाओं के लिये छात्रावास जैसी सुविधाएँ बनाना, पारिवारिक परामर्श इत्यादि भी बोर्ड की मुख्य गतिविधियों हैं। इसी प्रकार, राज्य स्तर पर भी महिला सशक्तीकरण के कार्यक्रम बनाये गये हैं।

सशक्तीकरण की पूर्वक्रियात्मक संस्थाएँ:-

समय-समय पर महत्वपूर्ण कानूनी फैसलों द्वारा न्यायपालिका ने भी महिला सशक्तीकरण को बढ़ावा देने में अपना योगदान दिया है। राष्ट्रीय महिला आयोग एवं राज्य स्तर पर इसके अनुषंगी संगठन भी महिलाओं के लिये संवैधानिक और कानूनी सुरक्षा तथा उसके प्रभावी क्रियान्वयन की जाँच और परीक्षण क कार्य कर रहे हैं। महिलाओं के विरुद्ध अत्याचार की व्यक्तिगत शिकायतों पर विशेष मामलों में, ये हस्तक्षेप भी करते हैं तथा सुधारात्मक उपाय भी सुझाते हैं। ये महिलाओं के बीच कानूनी जागृति पैदा करने वाले कार्यक्रमों का भी आयोजन करते हैं। कुछ राजनीतिक दल, विशेषकर कम्युनिस्ट और वामपंथी दल और उनके महिला संगठन जैसे आल इंडिया डेमोक्रेटिक वूमेन्स एसोसिएशन (AIDWA) और जनवादी महिला समिति भी महिला सशक्तीकरण के लिये आन्दोलित एवं संघर्षरत है। 1992 में, 73वें एवं 74वें संविधान संशोधन, पंचायत और नगर पालिकाओं के बारे में किये गये थे। अब, इन निकायों में दस लाख से अधिक महिलाएँ राजनीतिक रूप से सक्रिय हैं। यद्यपि बहुत सी परिस्थितियों में, जैसा कि रिपोटों से पता चलता है, पति इस भूमिका को अप्रत्यक्ष रूप से निभा रहे हैं परन्तु आने वाले समय में महिलाएँ निश्चित रूप से अपनी नवप्राप्त राजनीतिक शक्ति का प्रयोग स्वयं करेंगी।

मानवीय विकास परिप्रेक्ष्यः-

इसमें कोई संदेह नहीं कि महिला सशक्तीकरण में, मानवीय विकास परिप्रेक्ष्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। महिलाओं को पोषाहार, स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार, पर्यावरण और इन सबसे ऊपर उनका हिंसामुक्त जीवन जीने का मानवीय अधिकार जैसे विचारणीय बिंदु सार्वजनिक नीति का हिस्सा होना चाहिए। महिला सशक्तीकरण के लिये शिक्षा मूल तत्व है। वह शिक्षा ही है जो सामाजिक, नागरिक, राजनैतिक, आर्थिक और पर्यावरणीय मुद्दों पर तथा अजीविका के साधनों और लाभप्रद रोजगार प्राप्त करने का ज्ञान और जागृति उत्पन्न करती है। सरकारी और गैर सरकारी प्रयासों से इस दिशा में काफी प्रगति हुई है। महिलाओं की भूमिका के बारे में लोगों की पुरानी मान्यताएँ, महिला शिक्षा में प्रमुख बाधा है, परन्तु उससे हटकर शिक्षा के प्रसार को निर्णायक वरीयता देना है। पुरुषों की तुलना में, महिलाओं की कार्य में भागीदारी की दर काफी कम है, तथापि कालांतर में उनकी भागीदारी की दर पुरुषों की दर से ज्यादा तेजी से बढ़ रही है। 1991 की जनगणना के अनुसार, महिलाओं की कार्य में भागीदारी 22.27 प्रतिशत थी। अधिकांश महिलाओं के रोजगार संगठित क्षेत्र में हैं। हालांकि, अखिल भारतीय सेवाओं में महिलाओं की संख्या से महिला सशक्तीकरण के स्तर का कोई विशेष संकेत नहीं मिलता है। उच्चतर न्याय पालिका को उसके ऐतिहासिक फैसलों का श्रेय मिलना चाहिए, परन्तु संरचनात्मक रूप में यहाँ अभी भी

पुरुषों का ही वर्चस्व है। दहेज में यह विवाह के समय पत्नी द्वारा पति के लिये लाया गया धन, भेंट, बस्तुएँ या जायदाद है। इसे, विवाह के समय, दम्पति को महिला के माता-पिता तथा संबंधियों द्वारा दिये जाने वाले भुगतान के रूप में स्वीकार किया जाता है। यह एक प्रकार के अपेक्षित उत्तराधिकार के रूप में कार्य करता है। महिला अपने माता-पिता की सम्पत्ति और जायदाद में से अपना हिस्सा विवाह के समय प्राप्त करती है। हालांकि, दहेज से कन्यादान या स्त्रीधन का भ्रम नहीं होना चाहिए। कन्यादान में वधू को एक भेंट के रूप में वर को दिया जाता है। स्त्रीधन से संकेत उन भेटों की ओर है जो स्त्री को विवाह के समय या उसके बाद उसके मायके वालों या उसके पति द्वारा दी जाती हैं और वह धन जो उसे माता-पिता से उत्तराधिकार में मिलता है या जिसे वह अपने प्रयत्नों से कमाती है। एक महिला स्त्रीधन की पूर्ण स्वामिनी होती है तथा उसका पति इस पर कोई दावा नहीं कर सकता। यह उसकी पुत्रियों को विरासत में हस्तांतरित होता है जब तक कि उसने कोई अन्य वसीयत न की हो। उक्त वर्णित धारणाओं के चाहे जो प्रतिफल हों समाज में आये बदलावों और इसके अधिक से अधिक भौतिकवादी होने जाने के कारण, दहेज, सम्पत्ति प्राप्त कर अपना सामाजिक और आर्थिक स्तर उठाने का सबसे आसान रास्ता है। इस प्रकार यह सामाजिक मूल्यों के लम्पटीकरण और सामान्य भ्रष्टाचार से सीधे सम्बन्धित है। दुर्भाग्यवश, दहेज जो कभी प्रेम के प्रतीक के रूप में स्वेच्छापूर्वक दिया जाता था, अब विशेषकर मध्यवर्गीय समाज में, विवाह के लिये एक आर्थिक बाधा का रूप ले चुका है। दहेज अब अधिकार भाव से माँगा जाने लगा है। दहेज की समस्या विवाह के साथ समाप्त नहीं होती अपितु वर्षों बाद तक भी एक सतत् समस्या की भाँति बनी रहती है। त्यौहार और मेले जैसे अवसरों पर वर और उसका परिवार पैसे ऐंठते रहते हैं। चाहे व्यापार बढ़ाना हो या वर की बहन के लिए दहेज जुटाना हो, वर पक्ष निरन्तर पैसा माँगता रहता है। विवाह पूर्व अथवा उपरांत दहेज की माँग न पूरी होने के कई परिणाम होते हैं। विवाह संस्कार के समय ब्लैकमेल से लेकर शारीरिक, मानसिक तथा घरेलू हिंसा और बहू जलाने तथा अन्य अत्याचारों तक उसको परिणति होती है। बढ़ती बाजार अर्थव्यवस्था और घूमंडलीकरण ने भी दहेज की कुत्सित प्रथा को बढ़ाने में अपना योगदान दिया है। बढ़ता उपभोक्तावाद और उपभोग की संस्कृति भी हमारे मूल्य तंत्र को बेहूदा और खराब कर रहे हैं। मुस्लिम और ईसाई समुदाय, जो कुछ समय पहले तक इस प्रथा से प्रभावित नहीं थे, वे भी इस प्रथा से प्रभावित हो रहे हैं। इन समुदायों में दहेज से संबंधित शोषण और हिंसा अभी भी एक बहुत छोटे हिस्से में ही सीमित है। मुस्लिमों में बहू जला देने की घटनाएँ बहुत कम होती है जिसका प्रमुख कारण है कि हिन्दुओं की तुलना में उनमें तलाक देना आसान है। इससे भी बड़कर, ऐसे लोभी लोगों को सिद्धांततः दूसरी शादी करने की छूट भी होती है। इससे यह भली-भाँति स्पष्ट है कि सभी समुदायों में महिलाओं की दशा कमोबेश खराब

है। महिला समूहों और स्वयंसेवी संस्थाओं के लगातार दबाव के चलते सरकार ने दहेज निषेध कानून, 1961 लागू किया जिसे 1984 व 1986 में और प्रभावी बनाने के लिए संशोधित किया गया। किंतु इस समस्या से केवल कानूनी रूप से नहीं लड़ा जा सकता है। ऐसी प्रथाओं के विरुद्ध एक सशक्त सामाजिक आन्दोलन चलाने की आवश्यकता है। इस समस्या को मुख्यतया उस प्रचलित पितृसत्तात्मक मूल्यों के अन्तर्गत समझा जा सकता है जो स्त्रियों को हीन या दोयम दर्जे का मानती हैं। परम्पराओं का बोझ, पुरुषों को श्रेष्ठ मानने वाली विचारधारा, संवेदनहीन और कभी-कभी दोषियों के साथ साठगाँठ करने वाला कानून व्यवस्था तंत्र, घिसी-पिटी न्याय प्रणाली और हिंसा को क्षमा कर देने वाला समाज सभी इस स्थिति के लिये जिम्मेदार हैं, अन्यथा दहेज की खातिर अपनी पत्नी की हत्या कर देने वाले पुरुष की दूसरी शादी का क्या औचित्य है? बहुधा सामाजिक बहस एवं जाँच होती है" ।

स्त्री और प्रचार माध्यमः-

प्रचार माध्यम, महिलाओं के प्रति समाज की सोच व झलक दिखाने का कार्य करते हैं। बहुधा, यह उद्देश्यों को बढ़ावा देने में कोई सक्रिय भूमिका नहीं निभाते है। प्रचारकर्ताओं की राय में, वस्तुनिष्ठता के हित में, उन्हें किसी उद्देश्यों की वकालत करने वाली भूमिका अपनाने से बचना चाहिए। हिन्दी और अन्य प्रान्तीय (क्षेत्रीष) भाषाओं के लोकप्रिय सिनेमा में महिला की एक ढर्रे से बधी छवि कमजोर, समर्पित, और भोली, ही दिखाई जाती है। केबिल टी.बी. के चलन के बाद और लोकप्रिय धारावाहिकों के प्रसारण द्वारा धार्मिकता और कर्मकाण्ड को जबरिया लोगों के दिमाग में ठूंसा जा रहा है। सभी प्रकार के अंधविश्वासों और मुक्ति विरोधी कथानकों को बढ़ावा दिया जा रहा है। आजकल शायद ही कोई विषय सामाजिक विज्ञानों में शोधकर्ताओं, केन्द्रीय और राज्य सरकारों, योजना दलों और सुधारकों का ध्यान इतना आकृष्ट करता हो, जितना कि महिलाओं की समस्याएं। महिलाओं की समस्याओं के अध्ययन के उपांग जरा-विज्ञान (वृद्ध होने की प्रक्रियाओं का अध्ययन) के अध्ययन से लेकर मनोरोग विज्ञान और अपराक्त विज्ञान तक होते हैं, परन्तु महिलाओं में संबंधित एक महत्वपूर्ण समस्या जिस पर ध्यान नहीं दिया गया है और जिससे बचा गया है, वह है महिलाओं के विरुद्ध हिंसा की समस्या।

महिलाओं का उत्पीड़नः-

महिलाओं के विरुद्ध हिंसा की समस्या कोई नई नहीं है। भारतीय समाज में महिलाएं एक लम्बे काल से अवमानित (humiliation), यातना और शोषण का शिकार रही है, जितने काल के हमारे पास सामाजिक संगठन और पारिवारिक जीवन के लिखित प्रमाण उपलब्ध हैं, उनके आधार पर यह कहा जा सकता है। आज शनै:शनै: महिलाओं को पुरुषों के जीवन में महत्वपूर्ण, प्रभावशाली और अर्थपूर्ण सहयोगी माना

जाने लगा है; परन्तु कुछ दशक पहले तक उनकी स्थिति दयनीय थी। विचारधाराओं, संस्थागत रिवाजों, और समाज में प्रचलित प्रतिमानों ने उनके उत्पीड़न में काफी योगदान दिया है। इनमें से कुछ व्यावहारिक रिवाज आज भी पनप रहे हैं। स्वाधीनता के पश्चात हमारे समाज में महिलाओं के समर्थन में बनाए गए कानूनों, महिलाओं में शिक्षा के फैलाव और महिलाओं की धीरे-धीरे बढ़ती हुई आर्थिक स्वतन्त्रता के बावजूद असंख्य महिलाएं अब भी हिंसा की शिकार हैं। उनको पीटा जाता है, उनका अपहरण किया जाता है, उपके साथ बलात्कार किया जाता है, उनको जला दिया जाता है, उनकी हत्या कर दी जाती है या उन्हें आत्महत्या के लिए मजबूर किया जाता है। नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो (NCRB) के द्वारा जारी नवीन आंकड़े बताते हैं कि राष्ट्रभर में महिलाओं के विरुद्ध अपराध में 2010 के बाद से 7.1 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज हुई है (टाइम्स ऑफ इंडिया, 27 अगस्त 2013)। यहां उल्लेख करना महत्वपूर्ण है, कि महिलाओं के प्रति अपराध की विचारधारा की कोई सरल या सर्वमान्य परिभाषा नहीं है, परन्तु नई ऑक्सफोर्ड एडवांस लर्नर्स डिक्शनरी (2005 का 7वां संस्करण) ने इसकी परिभाषा आपराधिक कृत्य या ऐसा कृत्य जो नैतिक या बड़ी गलती है, तथा कानून द्वारा सजा प्राप्त करने योग्य है। भारतीय दंड सहिता (IPC) 1860 ने दोष (offence) शब्द का प्रयोग, अपराध (crime) के स्थान पर किया है। IPC की धारा 40 के अनुसार 'दोष (offence) ऐसा कृत्प है, जो इस संहिता के अनुसार सजा प्राप्त करने योग्य है। एक दोष (offence) दो प्रकार से होता है किसी कृत्य के करने से या किसी कृत्य के न करने से। इसलिए ऐसे 'अपराध जो महिलाओं के विरुद्ध' हो या जिसमें 'महिलाएं पीड़ित हों उन्हें महिलाओं के विरुद्ध अपराध माना गया (सिंह 2012)। अपहरण, हत्या, बलात्कार तथा छेड़खानी आदि महिलाओं के प्रति अपराध के उदाहरण है। पुलिस रिसर्च ब्यूरो, दिल्ली द्वारा महिलाओं के विरुद्ध अपराध को दो श्रेणी में बांटा गया है (1) सीडयन पैनल कोड (IPC) के अन्तर्गत अपराध और (ii) स्थानीय व विशेष कानून के दायरे में आने इते अपराध (देखें काइम इन इंडिया, नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो, दिल्ली 1994 प्रथम श्रेणी में 7 व दूसरी श्रेणी में 4 तरह के अपराध चिह्नित किए गए। IPC के तहत ये सात है- बलात्कार, अपहरण एवं भगा ले जाना, शारीरिक उत्पीड़न, छेड़छाड़ और 21 वर्ष से कम उम्र की महिलाओं के साथ दुराग्रह। इसके अलावा से बार अपराध भी स्थानीय व विशेष कानून के तहत आते हैं। ये हैं सती प्रथा, दहेज प्रथा, महिलाओं अश्लील चित्रण और अनैतिक देह व्यापार।

महिलाओं के विरुद्ध हिंसा की प्रकृति, विस्तार और विशेषताएं:-

महिलाओं के विरुद्ध हिंसा का वर्गीकरण इस प्रकार हो सकता है: (1) आपराधिक हिंसा जैसे बलात्कार, अपहरण, हत्या, घरेलू हिंसा जैसे दहेज संबंधी मृत्यु, पत्नी को पीटना, लैंगिक दुर्व्यवहार, विधवाओं

और/या वृद्ध। !! सामाजिक हिंसा जैसे पत्नी/पुत्रवधू को मादा भ्रूण (female foeticide) की हत्या के लिए बाध्य करना, महिलाओं से छेड़छाड़, सम्पत्ति में महिलाओं को हिस्सा देने से इंकार करना, अल्पवयस्क विधवा को सती होने लिए बाध्य करना, पुत्रवधू को और अधिक दहेज लाने के लिए सताना.। यदि हम विभिन्न एजेंसियों द्वारा दिये गए आंकड़ों का विश्लेषण करें तो पायेंगे, कि महिलाओं के प्रति अपराध के मामले प्रतिवर्ष बढ़ रहे हैं। एनसीआर (NCR) द्वारा जारी आंकड़ों के आधार पर एक गैर-सरकारी संगठन द्वारा किए गए अध्ययन के अनुसार 1998 से 2011 के बीच 13 वर्षों में महिलाओं के प्रति अपराध में 74 प्रतिशत वृद्धि दर्ज की गई। घोलू हिंसा के मामलों में वृद्धि की दर सबसे ज्यादा 140 प्रतिशत पर है, अपहरण 117 प्रतिशत, बलात्कार 60 प्रतिशत और छेड़छाड़ 40 प्रतिशत है। लगभग 30 प्रतिशत मामले पति और ससुराल वालों द्वारा क्रूरता के हैं (द संडे गार्जियन, 6 अप्रैल, 2013)। इसी तरह लोकसभा सचिवालय (No 2/RN/Ref/2013) द्वारा प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार महिलाओं के प्रति अपराध की कुल घटनायें (दोनों IPL और SLL) जो 2007 में 185.312 थीं, 2011 में बड़कर 2.28.650 हो गई। वर्ष 2012 में, यह संख्या 2,44,270 थी इस प्रकार वर्ष के दौरान 7 प्रतिशत से अधिक की वृद्धि दर्ज की गई। अपराध के लिहाज से यह आंकड़ा इस प्रकार है अपहरण (38,262), उनके शील (भंग) करने के इरादे के साथ महिलाओं पर हमला (45351) महिलाओं के शील भंग के लिए किए गए अपमान (9.173), पति और उसके रिश्तेदारों द्वारा क्रूरता (1,06.527) और विदेशों से लड़कियों को छल से धोखे से लाना (59) प्रतिशत के आधार पर हर वर्ष कुल अपराध क्रमश: 1.6, 1.9, 0.4, 4.5 और 0.0 हो रहे हैं (भारतीय दंड संहिता (IPC) के तहत)। यह कहा जाता है कि भारत में हर 30 मिनट में एक बलात्कार से 25 मिनट में छेड़छाड़, हर 40 मिनट में अपहरण और हर 4 घंटों में दहेज हत्या होती है। घरेलू हिंसा जैसे पत्नी को पिटना या घर की महिलाओं के साथ जबरन अनाचार के मामलों की सूचना कभी नहीं दी जाती है। लेकिन संकलित मामलों की चर्चा करते हुए हमें महिलाओं के खिलाफ हिंसा को प्रकृति और विस्तार के बारे में कुछ अनुमान हो सकता है। परन्तु कुछ साल पहले तक भारत में बलात्कार की समस्या को इतना गंभीर नहीं माना जाता था, जितना की पश्चिमी देशों में, विशेष रूप से अन्य देशों की तुलना में इसकी कम प्रसार दर को ध्यान में रखने हुए (उदाहरणार्थ अमेरिका में बलात्कार के अपराध प्रति लाख पर 26, कनाडा में 8 और ब्रिटेन में 5.9 है। इसकी तुलना में भारत में 0.5 प्रति एक लाख जनसंख्या है)। लेकिन अब भारत को दुनिया की 'बलात्कार की राजधानी' के रूप में जाना जाता है। और दिल्ली में सबसे ज्यादा बलात्कार के मामले सामने आए हैं। भारतीय शहरों में हर 4 बलात्कार में से एक दिल्ली में घटित होता है। NCRB को 2012 की भारत में अपराध पर रिपोर्ट के अनुसार बलात्कार भारत में सबसे तेजी से बढ़ता अपराध है

और वर्ष 1971-2012 के बीच इसमें 902 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। ये घटनाएं 2011 में 24206 से 2012 में बढ़कर 24930 हो गई अर्थात इनमें लगभग 3 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

हिंसा व्यवहार की सैद्धांतिक व्याख्या:

मनोचिकित्सीय (psychiatric) विचारधारा आक्रामक के व्यक्तित्व की विशेषताओं को आपराधिक हिंसात्मक व्यवहार का प्रमुख निर्णायक मानकर अपना अध्ययन केन्द्र बनाती है। सामाजिक-मनोवैज्ञानिक विचारधारा मानती है कि आपराधिक हिंसा को उन बाहरी बातावरण के कारकों, जो एक आक्रामक पर प्रभाव डालते है. के विश्लेषण करने से सबसे अच्छे तरीके से समझा जा सकता है। यह मॉडल की पारस्परिक क्रियाओं के रूपों का भी परीक्षण करता है, जो हिंसा के पुरोगामी (precursors) होते हैं। पारस्परिक क्रियाओं मैंने नैराश्य-आक्रमण सिद्धान्त, विकृति सिद्धान्त, आत्म-अभिवृत्ति का सिद्धान्त, और अभिप्राय आरोपण सिद्धान्त भी सामाजिक मनोवैज्ञानिक स्तर के विश्लेषण के क्षेत्र में आते हैं। इनके अतिरिक्त हिंसा की उपसंस्कृति का सिद्धान्त, सीखने का सिद्धान्त, एनोमी का सिद्धान्त, और संसाधन सिद्धान्त भी सामाजिक-सांस्कृतिक विश्लेषण के क्षेत्र में आते हैं। महिलाओं के विरुद्ध हिंसा (अपराध) पर मेरे आनुभविक अध्ययन में एक नए सैद्धान्तिक उपागम को विकसित करने के लिए मेरे सामने दो विकल्य थे एक तो 'हिंसा जो परिवार के अन्दर होती है' और 'हिंसा जो परिवार के बाहर होती है' को अलग-अलग से लेना और दूसरा, सब प्रकार की हिंसा को सम्मिलित करना और 'महिलाओं के विरुद्ध हिंसा' पर एक सिद्धान्त बनाना। मैंने दूसरे उपागम का उपयोग किया और इसमें मैंने हिरशी, गुल्टन, आदि समाजशास्त्रियों और अपराधशास्त्रियों की कुछ अवधारणाओं का प्रयोग किया। एक व्यक्ति के विरुद्ध हिंसा आवश्यक रूप से 'किसी के द्वारा हिंसा' और 'किसी के विरुद्ध हिंसा' है। इस तरह महिलाओं के विरुद्ध हिंसा को 'एक व्यक्ति द्वारा एक व्यक्ति के विरुद्ध हिंसा' समझा जाना चाहिए। इसके विपरीत में 'एक समूह के विरुद्ध हिंसा' होती है। एक व्यक्ति द्वारा हिंसा में उस (हिंसा) की उत्पत्ति व स्वरूप को स्वयं व्यक्ति में और उसकी परिस्थिति में ही निर्धारित किया जाना चाहिए। इस उपागम में एक व्यक्ति के न केवल अन्तर्जात व्यवहार का परन्तु उपार्जित व्यवहार का भी अध्ययन करना चाहिए। हमारा 'सामाजिक बन्धन उपागम' दोनों प्रकार के व्यवहार और सामाजिक संरचनात्मक परिस्थितियों पर भी विचार करता है। यह महिलाओं को विरुद्ध हिंसा के प्रकार और संरूपों को व्यक्तियों (अपराधियों) में उनके सामाजिक समंजनों, कुण्ठाओं और सापेक्षिक वंचनाओं, और सामाजिक संरचनात्मक परिस्थितियों में विभिन्नताओं और पीड़ितों की 'प्रतिरोक्त शक्ति' को ध्यान में रखते हुए व्याख्या करता है। मेरा तर्क है कि महिलाओं के खिलाफ हिंसा के कारण प्रमुखतः पांच कारकों

से प्रभावित हो सकते है: (1) स्थिति का निर्माण, जिसके कारण हिंसापूर्ण व्यवहार होता है। (2) स्थितिजन्य सुविधाएं जो हिंसा को बढ़ावा देती हैं, (3) बदलते हुए घटक जो हिंसा का नेतृत्व करते हैं, (4) हिंसा करने वाले व्यक्ति द्वारा तनाव अनुभव करना उसकी व्यक्तिगत समस्यायें, (5) पीड़ित का व्यवहार, हिंसा से पहले, हिंसा करने वाले के साथ। इन सभी कारकों पर सम्मिलित दृष्टि रखने से हम महिलाओं के विरुद्ध हिंसा के सही कारणों तक पहुंच सकते हैं। विशेष रूप से तीन कारक एक व्यक्ति को महिला के विरुद्ध हिंसा करने के लिए उत्प्रेरित करने की प्रमुख भूमिका निभाते हैं (1) अपराधी का अपने बालपन में दुर्व्यवहार का शिकार होने का इतिहास जैसे दुखद परवरिश, माता-पिता द्वारा शारीरिक प्रताड़ना और भावानात्मक अस्वीकृति (2) परिवार में तनावपूर्ण परिस्थितियों का सामना । (3) हताशा व निराशापूर्ण स्थितियां। पहला कारक इंगित करता है कि अपराधी का हिंसात्मक व्यवहार बचपन और किशोरावस्था के भावनात्मक पीड़ा के अनुभवों से उपजा है। यह पीढीगत सिद्धान्त की मान्यता पर आधारित है, कि हिंसक घर में वयस्क के रूप में बड़े होने पर व्यक्ति के हिंसक होने की संभावना बढ़ जाती है। बाद के सिद्धान्त पारंपरिक मूल्यों की विचारधारा से जुड़े हैं, जो महिला द्वारा विरोध न करने की स्थिति को दर्शाता हैं। चूंकि भूमिका में पुरुष उससे बेहतर है अतएव उसे विरोध करने का कोई अधिकार नहीं है। मेरा मॉडल एक महिला के व्यक्तित्व और सामाजिक वातावरण (जिसमें वह रहती और काम करती है) के बीच संबंध पर केन्द्रित है। मान लिया गया है, कि महिला का शोषण (बलात्कार, छेड़छाड़, पिटाई, दहेज के लिए उत्पीड़न, वेश्या का जीवन जीने के लिए अपहरण इत्यादि) महिला के व्यक्तित्व, दब्बूपन व कायरता और वातावरण का परिणाम है। हर महिला विविध विचारों और उम्मीदों के साथ अलग-अलग व्यक्तियों से बने एक सामाजिक वातावरण में रहती है। एक औरत का शोषण उसकी स्थिति और भूमिका के उसे व्यक्तिपरक धारणा और उसकी इच्छा, क्षमता और साहस के साथ चुनौती देने के प्रयासों पर निर्भर करेगा। दूसरे शब्दों में एक महिला का शोषण पांच बातों पर निर्भर करता है- (1) सामाजिक पृष्ठभूमि (उसकी उम्र, शिक्षा और प्रशिक्षण को संदर्भित करता है), (2) समर्थन का स्तर (उसके माता-पिता, सास-ससुर, साथियों और दूसरों के समर्थन पर निर्भर करता है). (3) दूसरों की उम्मीदें (उसका पति, माता-पिता, सास-ससुर, ससुराल वाले, बच्चे, परिजन, काम के सहयोगी, साथियों आदि), (4) आर्थिक आधार (उदाहरणार्थ वह निम्न, मध्यम या उच्च आय चर्ग के अन्तर्गत आता है या नहीं). (5) स्वयं की छवि (यह खुद को डरपोक, साहसी, असहाय, कमजोर, मजबूत आदि कैसा महसूस करती है, इस पर विचार करे)।

मेरा शोध है कि व्यक्ति की संरचनात्मक स्थिति (पारिवारिक संकट, हताशापूर्ण भूमिका, जीवन में दुर्भाग्यपूर्ण घटनाएं, अनुचित परवरिश) उसमें चिन्ताएं और तनाव पैदा करती हैं, जिसके कारण वह अपनी सामाजिक स्थिति के कारण खुद को समायोजित करने में विफल रहती है। अन्य व्यक्तियों और समूह के साथ दृढ़ता से खुद को संलग्न करने में विफल रहता है और कार्यवाही करने के लिए खुद को प्रतिबद्ध करने में असफल रहता है। परिणामस्वरूप कुंठायें कमजोर सेक्स या महिलाओं सहित अन्य लोगों के प्रति उसके दृष्टिकोण को निर्धारित करती हैं। उनके व्यक्तित्व के लक्षण और शिकार की प्रतिरोधी क्षमता पर निर्भर करते हुए एक आदमी एक महिला के विरुद्ध हिंसा का प्रयोग करेगा। इसलिए मेरा सिद्धांत एक संयोजक दृष्टिकोण पर आधारित है, जो सामाजिक कारक जैसे तनावपूर्ण स्थितियां (परिवार के अंदर और बाहर) हिंसा से पीड़ितों और अपराधियों के व्यक्तित्व, सांस्कृतिक परिवेश यथा मानक दबाव और अस्पष्टता के बारे में विचार करता है।

मानसिक आघात और मानववादी उपागमः-

महत्वपूर्ण प्रश्न यह हैं कि महिलाओं के विरुद्ध हिंसा के अपराधियों को दंडित करने के लिए क्या किया गया है, और महिलाओं के प्रति दुर्व्यवहार को रोकने के लिए क्या उपाय अपनाये जाने चाहिए। विरोधी अधिनियम 1961 के अलावा मौजूदा कानूनों में भी कुछ संशोधन किए गए थे। अनुभाग 1996 में दहेज मृत्यु के कारण से संबंधित शामिल हुआ। साक्ष्य अधिनियम महत्ता(शादीशुदा महिला द्वारा) की संभावना में कमी हेत और अन्य अनुभाग दहेज की मांग के फलस्वरूप महिला पर अत्याचार या उत्पीड़न के परिणाम में दहेज हत्या की सामाद की मांग को शामिल किया गया। इन कड़े कानूनों को बावजूद जांच प्रक्रिया में कई खामियों भावना के संदर्भ में वित्तियभगत तथाकथित ऊंची पहुंच के लोगों के हस्तक्षेप और कई बाहरी कारकों के कारण दहेज के लिए हत्या और उत्पीड़न के आरोपियों की एक बड़ी संख्या को दोषी करार नहीं कर पाना कानून के प्रावधानों के प्रभाव (प्रभावशीलत) और अभाव (कठोरता) को कम करता है। जब अदालत जमानत पर रिहाई और सबूतों तथ्यों की सख्ती से व्याख्या नहीं करेगी, तब तक यह संशय है कि कानून इस प्रकार के अपराध को कम कर सकेगा। अपने समाज में महिलाओं के प्रति दुर्व्यवहार को रोकने के लिए और उनके विरुद्ध हिंसा को कम करने के लिए हमें क्या उपाय करने चाहिए? यह सुझाव वैध और तर्कसंगत हो सकता है कि स्त्रियों की सामान्य प्रतिष्ठा और शिक्षा, प्रभावी वैधानिक उपायों और परीक्षण और रोजगार के अवसर देकर सुधारी जा सकती है तो यह महिलाओं के विरुद्ध हिंसा को कम करेगी, परन्तु यह अत्यंत व्यापक सुझाव है। इसी प्रकार यह सुझाया जाता है कि जनसंचार माध्यमों में महिलाओं के विरुद्ध हिंसा के प्रकरणों को बहुत अधिक महत्य नहीं दिया जाना

चाहिए। यद्यपि जनसंचार माध्यमों में महिलाओं के विरुद्ध हिंसा को सेन्सर करने के नैतिक और मानवतावादी कारण है, परन्तु हमारे पास ऐसा कोई प्रमाण नहीं है, कि ऐसी कार्रवाई में आवश्यक रूप से हिंसा में कमी आ आएगी। यही अपराधकर्ताओं को निवारक एण्ड देने और उसके संबंधियों द्वारा उसका सामाजिक बहिष्कार करने के बारे में भी सही है। ये उपाय उनके सामाजिक प्रभाओं के लिए वांछनीय हो सकते हैं, परन्तु हमें विश्वास नहीं हो सकता, कि वे किसी सीमा तक महिलाओं के शोषण को कम कर देंगे। यह मालूम करने के कोई प्रमाण नहीं है, कि कौनसी नौतियों को प्राथमिकता दी जाए। फिर भी कई ऐसे उपाय हैं जिनके किए जाने से महिलाओं का उत्पीड़न कम हो सकता है। पहले हम उस प्रकरण को लेते हैं जो पहले से कई महिला संगठनों और राजकीय एवं निजी सार्वजनिक संस्थाओं का ध्यान आकर्षित कर रहा है। यह है पीड़ितों की सुरक्षा, मदद और सलाह की आवश्यकताओं की पूर्ति करना। कुछ महिलाओं को (पद्यपि सब को नहीं) जिसकी सबसे अधिक आवश्यकता है, यह है आश्रय। महिलाएं जो तानाशाह सास-ससुर और शराबी पतियों के साथ रह रही है, अस्थायी अथवा स्थाई रूप से अपना घर छोड़ देगी, यदि उनके पास कोई आश्रय उपलब्ध हो। स्वयंसेवी संगतनों को, जो स्त्रियों को ऐसे आवास मुहैया कराते हैं, अपनी परियोजनाओं का प्रचार करना चाहिए। यह ध्यान में रखना चाहिए कि वर्तमान में जो महिलाओं के लिए घर (अकेले और/या विहित के लिए) हैं, वे आवश्यकतानुसार मांग को पूरा नहीं कर पाते हैं। उनमें अक्सर भीड़ भाड़ होती है, वित्तीय सहायता का अभाव होता है और वे सुरक्षा नियमों का पालन नहीं करते। महिला संगठन कई स्वियों के दुःखों के उपशमन में योगदान देंगी पदि वे उन्हें अल्पकालिक आवास की सुविधा प्रदान करती हैं और अन्ततः स्थाई मकान दिलवाने में मदद करती हैं, विशेषरूप से उन विवाहित स्थियों को जो कष्ट में हैं या बलात्कार, भगाये जाना, मार डालने की कोशिश जैसी हिंसा की शिकार हैं। विभिन्न प्रकार के अल्पकालिक आवास जो पीड़ित स्त्रियों और विधवाओं को दिये जा सकते हैं, उनका मूल्यांकन और तुलना करना अत्यावश्यक है।

दूसरा, पीड़ित महिलाओं को इसकी भी आवश्यकता है, कि उनकी रोजगार ढूंढने बच्चे की देखभाल की सुविधाओं को उपलब्ध कराने, और अस्थायी रूप से वित्तीय सहायता दिलवाने में सहायता की जाए। इस उद्देश्य के लिए परामर्श केन्द्र किसी केन्द्रीय स्थान पर खोले जा सकते हैं, परन्तु वे नागरी-गृहों से दूर होने चाहिए, जिससे कि उनका अच्छा प्रचार हो सके और गृहों में रहने वालों की सुरक्षा को भी खतरा न हो।

तीसरा, महिलाएं, जो शोषण की शिकार हैं, की सहायता के लिए सस्ती और कम औपचारिक अदालतों की स्थापना भी एक उपाय हो सकता है। इस सुझाव का यह आशय नहीं है। केवल महिलाओं के मामले ही निबटाएंगी। इनका कार्यक्षेत्र और बड़ा होना चाहिए। वर्तमान में हमारे देश में पारिवारिक अदालतों की

प्रणाली कुछ राज्यों में है। परन्तु इन अदालतों का प्रमुख रूप से उद्देश्य कार्य क्षेत्र बढ़ाया जा सकता है शादियों को टूटने घरेलू और गैर-घरेलू समस्याओं को सम्मिलित किया जा सकता है।

चौथा, स्वयंसेवी संगठनों को, जो महिलाओं की निजी समस्याओं के बारे में उनके ससुराल वालों से या पुलिस या अदालतों से या संबंधित व्यक्ति से बात कर सके, सशक्त बनाना और उनकी संख्या बढ़ाना भी इतना ही आवश्यक है। यह इसलिए कि एक अकेली स्त्री की बात को कोई महत्व नहीं दिया जाता। वास्तव में, यदि यह अपने अधिकार मांगती है, या मौलिक विचार रखती है, या अपने विचारों को व्यक्त करती है, और अपनी उत्कंठाओं को उजागर करती है, तो उस पर स्पष्टवादी होने का आरोप लगाया जाता है। परन्तु यदि महिलाओं का एक समूह एकत्र होता है, और स्त्री के दुख के विरुद्ध आवाज उठाता है, तो अपने विचारों को दृढ़तापूर्वक व्यक्त कर सकती हैं, और प्रभावी सिद्ध हो सकती हैं। पांचवां, ऐसे संगठनों का प्रचार होना चाहिए जो महिलाओं को निःशुल्क कानूनी सहायता देते हैं जिससे कि निर्धन स्त्रियां उनके पास जाकर सहायता मांग सकें।

संदर्भ-सूंची

1. आहूजा, मुकेश, विधवाएँ, न्यू एज पब्लिशर्स, दिल्ली, 1996. 113-35
2. आहूजा, राम, महिलाओं के विरुद्ध अपराध, रावत प्रकाशन, जयपुर, 1987. -35 समाजशास्त्रीय अपराध विज्ञान, न्यू एज पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 1987.
3. ब्लूमर, डी., न्यूरो-मनोरोग संबंधी हिंसक व्यवहार के पहलू, टोरंटो विश्वविद्यालय, कनाडा, 1973.
4. बोरलैंड, मैरी (सं.), परिवार में हिंसा, मैनचेस्टर यूनिवर्सिटी प्रेस, मैनचेस्टर, 1976।
5. चैपमैन, जे.के. और गेट्स, मार्गरेट (संपादक), द विक्टिमाइजेशन ऑफ वीमेन, सेज पब्लिकेशन्स, बेवर्ली हिल्स, कैलिफोर्निया, 1976.
6. कर्टिस, लिन ए., क्रिमिनल वायलेंस, लक्सिंगटन बुक्स, केंटकी, 1974.
7. फिंकेलहोर, डेविड, गेल्स, रिचर्ड, हॉटालिंग, गेराल्ड और स्ट्रॉस, मुरैना, द डार्क साइड ऑफ फैमिलीज़, सेज पब्लिकेशन्स, बेवर्ली हिल्स, कैलिफोर्निया, 1983.
8. हिल्बरमैन, ई. और मुनसन, एम., "सिक्सटी बैटर्ड वूमेन", विक्टिमोलॉजी: एन इंटरनेशनल जर्नल, खंड 2, 1979-78.